वैदिक साहित्य में "नेता" का स्वरूप

"नेता" शब्द का प्रयोग प्राय: राजनीति से जुडे व्यक्तियों के लिए किया जाता है। आम लोग"नेता"शब्द का अभिप्राय नही समझते।राजनीति में जो व्यक्ति"अगुआ"बन जाता है,वही"नेता" के पद से सम्बोधित किया जाता है। लक्ष्य उसका कैसा भी हो, किन्तु आम लोगों का नेतृत्व करने के कारण "उसे सब" नेताजी कहने लगते हैं । साधारण "नेता" का सम्मान प्रदान करने में नही हिचकिचाता।

किन्तु "नेता" शब्द की शास्त्रीय परिभाषा इस जनसाधारण की परिभाषा से पृथक है । "नेता" का अभिप्राय अग्रणी से है । वैदिक ऋचाओं में "अग्नि" को "अग्रणी" बताकर उससे मानवीय मार्गदर्शक हेतु निवेदन किया गया है । अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम् । (ऋ १/१/१) ऋग्वेद की इस प्रथम ऋचा में अग्नि को "पुरोहित" शब्द से सम्बोधित किया गया है । "अग्नि" यहाँ ईश्वरवाचक है, एवं संसार से पूर्व वर्तमान होने के कारण ईश्वर पुरोहित है । शरीर से पूर्व जीव विद्यमान होता है, अत: जीव भी पुराहित है । संसार के समस्त पदार्थो से पूर्व "अग्नि" के सूर्य रूप में, दर्शन होते हैं, अत: अग्नि "पुराहित" है । समस्त यज्ञ अग्नि के द्वारा ही साध्य होते हैं, अत: अग्नि यज्ञ प्रकाशक है । ऋतुओं तथा व्यवस्थाओं को संगत करने से भगवान् "ऋत्विक् है । ऋतुओं का होना सूर्य रूप अग्नि पर निर्भर है, अत: अग्नि ऋत्विक है । ईश्वर के समान किसी का दान नही अत: वह "होता" है । कर्मफल भोक्ता होने के कारण जीव भी "होता" है । सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, पय, पावक, एवं पद्मनादि रत्नपदार्थो का निर्माता होने के कारण जीव भी "रत्नधातमम्" है । "अग्नि" शब्द का अभिप्राय "अग्रणी" यह अगुआ से है, तथा यह ईश्वर वाचक है । यजुर्वेदानुसार

"तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमा: ।
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म ता आप: स प्रजापति ।" (३२/१)

अर्थात परमेश्वर ही अग्नि, वही आदित्य, वही वायु तथा वही चन्द्रमा है। वही शुक्र,वही ब्रह्म वही आप: और प्रजापति हैं आर्थात् अग्नि वायु मित्र, वरूण आदि नाम मुख्यवृत्ति से ईश्वर के हैं।"अग्रणी" होने से अग्नि सबका उन्नायक है । ईश्वर सबका उन्नति साधक होने से पूजनीय है।

"नेता" भी सबका मार्गदर्शक होने से श्रद्धेय है, क्योंकि वह सभी को आगे ले जानेवाला है । इस दृष्टिकोण से यदि "नेता" शब्द की विवेचना की जाये, तो राजनैतिक नेता "अग्नि" की कोटि में नही आ सकते । सूर्य के समान तेजस्वी नेता ही जनसम्प्रदाय एवं राष्ट्र का मार्गदर्शन कर सकता है । किन्तु जो भाग पद लिप्सु बन कुर्सी से चिपका रहना चाहता है, जिसका लक्ष्य राष्ट्रहित नही अपितु स्वार्थपूर्ति है, जिसका लक्ष्य राष्ट्रहित नही अपितु स्वार्थपूर्ति है । जो लोकानंरंजन से दूर रहकर प्रजा के कष्टों काध्यान नही रखता, प्रजा की समस्याओं को ही संवर्धित करता है, आश्वासनों को पूर्ण करने में विफल होकर केवल जनहित का आडम्बर करता है, वह आम लोगों की दृष्टि में भले ही "नेता" कहलाये, किन्तु वैदिक दृष्टि से वह केवल भ्रष्ट चरित्र है । जो नेता का परिधान धारण कर, राष्ट्र को असुरक्षा एवं अवनति की ओर ले जाता है ।

बिना साधन के साधना निष्फल होती है । नेता भी "साधनों" के द्वारा ही बना जा सकता है । यजुर्वेद की ऋचाओं में नेता बनने के साधनों का विवेचन किया गया है ।-

"भुवो यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्रा नियुदभि: सचसे शिवाभि: ।
दिवि मूर्धानं दधिषे स्वर्णां जिह्वामग्न चकृषे हव्यवाहम् ।" (यजु १५/२३)

इस मन्त्र मे "नेता" बनने के निम्न उपाय वर्णिह हैं-

१) यत्रानियुद्भि: सचसे शिवाभि - नेता बनने के अभिलाषी को सर्वप्रथम अपना व्यवहार सुधारना चाहिये, उसका व्यवहार ऐसा हो, जिससे सबका भला हो ।

२) दिवि दधिषे मर्घानम् - वह ज्ञानादि गुणों के कारण सर्वाधिक उच्च हो । "मूर्धा" का यही अभिप्राय है । यदि नेता योग्यता मे कम हुआ, तो उसका नेतृत्व नही चल सकेगा ।

३) स्वेर्षा जिव्हार्मग्ने चकृषे हव्यवाहम् - अपनी मधुर वाणी को भाग प्राप्त कराने वाली बनाये, माधुर्यपूर्ण वाणी होना नेता के लिए अत्यावश्यक है । मनुजीने मधु वाणी का संभाषण मानव भाग के लिए आवश्यक बनाया है ।

अहिंसयैव हि भूतांना कार्य श्रेयाऽनुशासनम् ।
वाक् चैव मधुरा श्लक्ष्णा प्रयोज्याधर्ममिच्छता ।।

अर्थात धर्माभिलाषी को प्राणियों का अनुशासन अहिंसापूर्वक ही करना चाहिये । वाणी में केवल मिठास ही आवश्यक नही अपतु माधुर्य भी होना चाहिये । वाणी एवं सद् व्यवहार से प्रत्येक को वशीभूत किया जा सकता है । यदि नेता के पास मधुर वाणी न होगी, जनता उससे प्रभावित नही हो सकती, जनता के हृदय को जीतने के लिए "नेता" को मधुर वाणी के साथ साथ मधुर एवं लोकमंगलकारी, कर्म भी करने चाहिये, जिससे वह प्रजा के हृदयों को जीत सके ।

ऋग्वेद मे "रक्षक" के सम्बन्ध मे कुछ ऐसे ही भाव हैं -

"यो दग्नेभिर्हव्या यश्च भूरिभिर्यो अभीके वरिवोविन्नृषाह्ये ।
तं विखादे सन्निमद्य श्रुतं नरमर्वाञ्चमिन्द्रमवसे ।।" (ऋ १०/३८/४)

जिसे छोटे बुला सकें, बडे बुला सकें, जो दूरस्थ मनुष्य से सहन योग्य कार्य में विधान का ज्ञान रखता हो,विपत्ति के समय हम ऐसे अतिशय शुद्ध विद्वान् सरल ऐश्वर्य सम्पन्न नेता को रक्षा के लिये नियुक्त करते हैं।

"नेता" राष्ट्र का उन्नायक ही नही, प्रजा रक्षक एवं प्रजा के कष्टों का निवारक है। "नेता" का वैदिक स्वरूप प्रत्येक "नेता" के लिए प्रेरक और ग्रहणीय है। बिना इन गुणों के यदि कोई नेता पद को प्राप्त करता है, तो उसका नेतृत्व चिरस्थायी नही । तथा वह राष्ट्र को अनेक समस्याओं से घेर देता है। असन्तुष्ट प्रजा ऐसे नेता को सदैव पदच्युत कराना चाहती है। वर्तमान में"नेता" का वैदिक स्वरूप से मंडित होना आवश्यक है, सभी राष्ट्रोन्नति सम्भव है।

डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी